॥ मङ्गलाशासनानि ॥

आचार्यों के आशीर्वादों का हिन्दी रूपान्तर

।। श्री शृङ्गेरी श्रीजगद्गुरुमहासंस्थानम् ।।

श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यवर्य पदवाक्यप्रमाणपारावारपारीण
यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाध्यष्टाङ्गयोगानुष्ठाननिष्ठ
तपश्चक्रवर्त्यनाद्यविच्छिन्न श्रीशङ्कराचार्यगुरुपरम्पराप्राप्त षड्दर्शनस्थापनाचार्य
व्याख्यानसिंहासनाधीश्वर सकलनिगमागमसारहृदय सांख्यत्रयप्रतिपादक वैदिकमार्गप्रवर्तक
सर्वतन्त्रस्वतन्त्रादिराजधानी विद्यानगरमहाराजधानी कर्णाटकसिंहासनप्रतिष्ठापनाचार्य
श्रीमद्राजाधिराजगुरुभूमण्डलाचार्य ऋष्यशृङ्गपुरवराधीश्वर तुङ्गभद्रातीरवासि
श्रीमद्विद्याशङ्करपादपद्माराधक श्रीजगद्गुरु श्रीमदभिनवविद्यातीर्थस्वामिगुरुकरकमलसञ्जात

।। श्री जगद्गुरु शृङ्गेरी श्रीमद्भारतीतीर्थमहास्वामिभिः ।।

। श्रीविद्याशङ्कर ।

नारायणस्मरणपूर्वक विरचित ये आशीर्वचन समस्त आस्तिक महाजनो में सम्यक् उल्लास का प्रसार करें।

इस जगत् में श्रेय प्राप्ति की इच्छा रखने वालों के लिये अनुशासित धर्माचरण ही एकमेव परम साधन है। धर्मसम्मत अनुशासित आचरण रोगमुक्त दृढ शरीर से ही सम्भव हो पाता है, और रोगमुक्त दृढ शरीर सम्यक् आहार-विहार से सम्भव होता है। अतः अत्यन्त भोजन करने वाले और नितान्त भोजन न करने वाले दोनों ही धर्माचरण में असमर्थ हो जाते हैं। इस सन्दर्भ में स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण का आदेश है कि योग अति भोजन करने वाले अथवा भोजन की सर्वथा उपेक्षा करने वाले के लिये नहीं है – नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति नचैकान्तमनश्नतः, इत्यादि। इसीलिये योगशास्त्र के ज्ञाता सर्वदा सम्यक् हितकारी एवं पौष्टिक अन्न का सम्यक् मात्रा में उपभोग करने के अनुशासन को, हित-मित-मेध्य आहार करने के नित्य अनुष्ठान को ही तप की संज्ञा देते हैं।

अन्न शब्द का अर्थ मुख्यतः आहार से ही है – जो खाया जाता है वही अन्न है। उस अन्न

Centre for Policy Studies www.cpsindia.org

की विशिष्टता अनेक श्रुतिवाक्यों में प्रतिपादित हुई है, यथा 'अन्नं न निन्द्यात्', अन्न की निन्दा न करें, 'अन्नं न परिचक्षीत', अन्न की उपेक्षा न करें, 'अन्नं बहु कुर्वीत', अन्नबाहुल्य करें, आदि।

अन्न के समुचित उत्पादन एवं विनियोग में निश्चय ही लोगों का हित निहित है। अन्न के समुचित उत्पादन एवं विनियोग के इस मूलभूत विषय को छोड़कर अन्य विषयों के प्रति परिश्रम करने वाले पर तो 'किमस्त्यनुपनीतस्य वाजपेयादिभिर्मखैः' का न्याय ही सटीक बैठता है। भला जिसका अभी उपनयन ही न हुआ हो उसका वाजपेयादि यज्ञों से क्या लेना-देना हो सकता है?

अब 'समाजनीति समीक्षण केन्द्र' नामक संस्था द्वारा लोगों में अन्न की महिमा का प्रसार करने के उद्देश्य से 'अन्नं बहु कुर्वीत' शीर्षकयुक्त एक ग्रन्थ प्रकाशित किया जा रहा है। इसी सन्दर्भ में एक गोष्ठी का भी आयोजन हो रहा है। इस गोष्ठी में अनेक मठाधीश, बहुत से विद्वान् एवं अन्य विशिष्ट जन एकत्र हो इस विषय पर विचार करेंगे और लोगों में अन्न के प्रति चेतना एवं श्रद्धा जागृत करेंगे।

इस कार्यक्रम को जानकर हम अत्यन्त प्रसन्न हैं। श्रीशारदाम्बा एवं श्रीचन्द्रमौलीश्वर की पूर्ण कृपा से इस संस्था को अपने सङ्कल्पित कार्य के समुचित निर्वाह के लिये विशिष्ट शक्ति प्राप्त हो और यह गोष्ठी भी निर्विघ्न सम्पन्न हो! यही हमारा आशीर्वाद है।

शृङ्गगिरि
धातृवत्सरीय वैशाखकृष्णदशमी भानुवासर
१२.५.१९९६

इति नारायणस्मरणम्
श्री

Centre for Policy Studies *www.cpsindia.org*

श्रीः

श्रीमते रामानुजाय नमः

श्रीमत् परमहंस
॥ श्री कलियन् वानमामलै रामानुज जीयर् स्वामिगल् ॥

श्री वानमामलै मठम्
नाङ्गुनेरि

अभिनन्दनपत्रम्

। स्वस्ति श्रीर्दिशतात्। ११.३.९६ के दिन दो भौतिकशास्त्री और एक अर्थशास्त्रविद्, ये तीन विवेकशील विद्वान् श्रीमठ में आये और हमें उनके साथ दीर्घ वार्तालाप का सुख प्राप्त हुआ। इन तीन विद्वानों का परिचय है – श्री जितेन्द्र बजाज, श्री मण्डयम् दोड्डमने श्रीनिवास और सुप्रसिद्ध वरिष्ठ विद्वान् कीर्तिमूर्ति श्रीमद् उभयवेदान्ताचार्य कारप्पाङ्काडु श्रीवेङ्कटाचार्य स्वामी के पुत्ररत्न श्री वरदराजन्। ये तीनों 'समाजनीति समीक्षण केन्द्र' नामक संस्था की ओर से श्रीमठ में उपस्थित हुए थे। इन के साथ हमारा संवाद अत्यन्त विस्तृत एवं फलग्राही रहा। उस दिन इन दो भौतिकशास्त्रियों द्वारा विरचित 'अन्नं बहु कुर्वीत' शीर्षकयुक्त पुस्तक की पूर्वप्रकाशन प्रति भी हमें समर्पित की गयी।

अन्य कार्यों की व्याप्ति में भी हमने इस पुस्तक का आरम्भ से अन्त तक अवलोकन किया है। और अब हमारा यह दृढ विश्वास है कि इस प्रकार का ग्रन्थ प्रथमतः ही रचा गया है और प्रथमतः प्रकाशित हो रहा है। अपने केन्द्र के उद्देश्यों का अनुसरण करते हुए इन दो विद्वानों ने सर्वथा विलक्षण रीति से इस सुशोभन ग्रन्थ की रचना की है। यह तो स्पष्ट ही है कि इस ग्रन्थ की रचना करने से पूर्व इन दोनों रचयिताओं ने अनेक श्रुति, पुराण एवं इतिहास ग्रन्थों का सम्यक् आलोड़न किया है। कृष्ण यजुर्वेद से सम्बन्धित तैत्तिरीयोपनिषद् में प्रतिपादित अन्न एवं अन्नदान

Centre for Policy Studies www.cpsindia.org

के माहात्म्य का प्रधानतया अवलम्बन लेते हुए और तैत्तिरीयोपनिषद् के ही श्रुतिवाक्य 'अन्नं बहु कुर्वीत' के शीर्षक से रचे गये इस ग्रन्थ में विभिन्न विषयों को क्रमपूर्वक विभिन्न अध्यायों में सुसज्जित किया गया है। इस प्रकार इस ग्रन्थ में अन्न एवं अन्नदान से सम्बद्ध समस्त विषयों का परम मनोहारी विवेचन हुआ है। इस ग्रन्थरत्न में श्रीभविष्यपुराण एवं अन्य अनेक स्थानों पर पायी जाने वाली राजा श्वेत की कथा का वर्णन भी आया है, और अन्य अनेक कथाओं एवं विशेषतः श्रीरामायण एवं श्रीमहाभारत से शतशः श्लोकों को सन्दर्भानुसार अत्यन्त निपुणता से उद्धृत किया गया है।

अतिथिसत्कार के सन्दर्भ में तैत्तिरीयोपनिषद् का स्पष्ट निर्देश है – 'मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव, अतिथिदेवो भव', माँ तुम्हारे लिये देवसमान हों, पिता देवसमान हों, आचार्य देवसमान हों एवं अतिथि देव समान हों। उपनिषद् का यह प्रतिपादन हमारी पुण्य भारतभूमि पर अतिथि सत्कार के सम्बन्ध में सनातन सिद्धान्त के रूप में प्रतिष्ठापित रहा है। प्रस्तुत ग्रन्थ में पुराणों एवं इतिहासों से अनेक श्लोक उद्धृत कर इस सनातन सिद्धान्त का विस्तृत विवेचन किया गया है। यहाँ उद्धृत श्लोकों के परिशीलन से हमारी अपनी द्रविड़ भाषा के सुविख्यात सङ्गकालिक ग्रन्थ 'तिरुक्कुरल्' में इस विषय में हुए प्रतिपादन का स्मरण सहज ही हो आता है।

किसी गृहस्थ के गृहद्वार पर जो भी जिस किसी भी समय उपस्थित होता है वह उस गृहस्थ के लिये 'अतिथि' ही है, अतिथि के लिये अपने आगमन के तिथि-काल की पूर्वसूचना देना आवश्यक नहीं होता। हमारी पुण्यभूमि भारतवर्ष की प्राचीनतम संस्कृति ऐसी उदार हुआ करती थी। यदि हम अपने पूर्वयुग की अतिसंवृद्ध विज्ञान से युक्त आज के युग से तुलना करें तो भी अन्न उत्पादन एवं प्रजा को प्राप्त होने वाले अन्न की मात्रा के विषय में हमारा पूर्वयुग आज की अपेक्षा महत्तर ही दिखायी देता है। और आज हमारे यहाँ अन्यों की तुलना में भी सर्वथा अपर्याप्त अन्न उपलब्ध हो पाता है। श्रीबजाज एवं श्रीश्रीनिवास ने अन्न के उत्पादन एवं उपलब्धि के इस महत्त्वपूर्ण विषय का सांख्यिकी आँकड़ों के आधार पर सम्यक् विवेचन करते हुए विशद प्रतिपादन किया है।

जीवन के आधारभूत और हमारी प्राचीन संस्कृति के स्तम्भभूत इस विषय का अभूतपूर्व एवं सर्वथा प्रथमतः विवेचन प्रस्तुत करते हुए इस ग्रन्थरत्न की रचना करने वाले परम प्रशंसनीय प्रतिभा के धनी इन दोनों प्राचार्यों की ख्याति सब ओर प्रकाशित हो! यही हमारा हार्दिक आशीर्वाद है। हम सप्रेम आशीर्वाद देते हैं कि इस उत्कृष्ट रचना का सर्वत्र प्रसार हो! यह सर्वत्र पढ़ी जाये और यह ग्रन्थ परम फलवान् हो! हम अपने कुलदेवता दिव्यदम्पती श्रीवरमङ्काम्बा और

श्रीदेवनायकविभु के चरणकमलों पर प्रार्थना करते हैं कि इस ग्रन्थ के कर्ता ये दोनों महानुभाव दीर्घायु हों, और इसी प्रकार हमारी जन्मभूमि इस महान् भारतभूमि की बहुशः सेवा करते रहें।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्॥

सब सुखी हों, सब रोगमुक्त हों, सब का भला हो, किसी के भाग में किसी प्रकार का कोई दुःख प्रस्तुत न हो।

नाङ्गुनेरि
१९.३.९६

श्रीरामानुजन्
श्रीकलियन् वानमामलै रामानुजजीयर् स्वामी

Centre for Policy Studies *www.cpsindia.org*

श्रीहरिः

श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यवर्य
श्रीशङ्करभगवत्पादाचार्यपरम्परागत

॥ जगद्गुरु श्रीशङ्कराचार्य श्रीनिश्चलानन्द सरस्वती महाराज ॥

श्रीगोवर्धनपीठ
पुरी

'अन्नं बहु कुर्वीत', अन्नबाहुल्य करो!, इस श्रुतिवाक्य के माध्यम से तैत्तिरीयोपनिषद् अन्न के प्रचुर उत्पादन, प्रचुर सञ्चय एवं प्रचुर वितरण का उपदेश देता है। स्थूलदेह के उपादान पञ्चमहाभूतों को 'पञ्चदशी' में अन्न की ही संज्ञा दी गयी है। छान्दोग्य उपनिषद् में कहा गया है कि आहार ही अन्न है। दार्शनिक दृष्टि से भोक्ता का भोग्य अन्न ही है, जो भी पदार्थ किसी अन्य के उपभोग में आता है वह अन्न है, और इस प्रकार समस्त भोग्य पदार्थ अन्न हैं। सप्तान्नब्राह्मण में देवों, मनुष्यों और अन्य समस्त जीवों के उपभोग में आने वाली समस्त वस्तुओं के लिये 'अन्न' शब्द का व्यवहार हुआ है। इस रीति से दर्शपौर्णमास आदि कर्म देवों के लिये अन्न हैं, व्रीहि आदि अनाज मनुष्यों के लिये अन्न हैं, वीरुध आदि घास पशुओं के लिये अन्न हैं, और वाक्, मन एवं प्राण समस्त प्राणधारी जीवों के लिये अन्न हैं।

भारतीय मनीषियों ने विविध लोक-लोकान्तरों में स्थित स्वयम्भू, मनसिज, जरायुज, अण्डज, उद्भिज्ज एवं स्वेदज वर्ग के प्राणियों के भोग्य पदार्थों को अन्न की संज्ञा दी है। अतः अमृत देवों के लिये, सुधा नागों के लिये, स्वधा पितरों के लिये, वीरुध पशुओं के लिये और व्रीहि आदि मनुष्यों के लिये अन्न हैं, और प्राण तो सब प्राणियों के लिये अन्न हैं ही।

समस्त अन्न जल से ही उत्पन्न होते हैं। श्रीमद्भागवत के पृथिवीदोहन प्रसङ्ग में श्री व्यासाचार्य पृथु के चरित्र के माध्यम से विविध अन्न सम्बन्धी वृहद् मीमांसा प्रस्तुत करते हैं। निश्चय ही जल ही समस्त अन्नों का मूल स्रोत है, और इस सन्दर्भ में 'जल' से अन्नपोषक 'सोम' की ही व्यञ्जना

Centre for Policy Studies www.cpsindia.org

होती है। अतः अन्नदान एवं जलदान की महिमा अन्य दानों की अपेक्षा कहीं गुरुतर हैं। दानवीर लोग देह त्यागने के उपरान्त दिव्यातिदिव्य लोकों में पहुँचकर यशस्वी होते हैं। इस लोक में भी वे दीर्घायु एवं विपुल धन-सम्पदा के भागी होते हैं।

महाभारत के अनुशासनपर्व के सत्तासठवें अध्याय में भीष्म पितामह युधिष्ठिर के लिये अन्नदान एवं जलदान की महिमा का वर्णन करते हुए कहते हैं –

न तस्मात् परमं दानं किञ्चिदस्तीति मे मनः।
अन्नात् प्राणभृतस्तात प्रवर्तन्ते हि सर्वशः॥

अन्न एवं जलदान से बढ़कर कोई दान नहीं होता, ऐसा मेरा दृढ विश्वास है। क्योंकि, समस्त जीव अन्न से ही प्राण प्राप्त करते हैं और अन्न से ही जीवित रहते हैं।

तस्मादन्नं परं लोके सर्वलोकेषु कथ्यते।
अन्नाद् बलं च तेजश्च प्राणिनां वर्धते सदा॥

इसीलिये समस्त जन अन्न को ही इस लोक में सर्वोपरि बताते हैं। प्राणियों के तेज एवं बल में सर्वदा अन्न से ही वृद्धि हुआ करती है।

अन्ने दत्ते नरेणेह प्राणा दत्ता भवन्त्युत।
प्राणदानाद्धि परमं न दानमिह विद्यते॥

इस लोक में अन्यों को अन्न देने वाला प्राणों का ही दाता बन जाता है। और प्राणदान से उच्चतर तो कोई दान होता ही नहीं है।

अन्नं वापि प्रभवति पानीयात् कुरुसत्तम।
नीरजातेन हि विना न किञ्चित् सम्प्रवर्तते॥

कुरुसत्तम युधिष्ठिर! वह अन्न जल से ही पैदा होता है। नीरजात अन्न के बिना किसी का प्रवर्तन सम्भव नहीं।

नीरजातश्च भगवान् सोमो ग्रहगणेश्वरः।
अमृतं च सुधा चैव स्वाहा चैव स्वधा तथा।
अन्नौषध्यो महाराज वीरुधश्च जलोद्भवाः।

यतः प्राणभृतां प्राणाः सम्भवन्ति विशाम्पते।
देवानाममृतं ह्यन्नं नागानां च सुधा तथा।
पितृणां च स्वधा प्रोक्ता पशूनां चापि वीरुधः॥

समस्त ग्रहों के ईश्वर भगवान् सोम जल से ही उत्पन्न हुए हैं। इसी प्रकार अमृत, सुधा, स्वाहा एवं स्वधा का उद्गम भी जल से ही हुआ है। महाराज युधिष्ठिर! अन्न, औषधियाँ एवं वीरुध भी जल से ही उत्पन्न होते हैं। प्रजाओं के रक्षक युधिष्ठिर! समस्त प्राणधारियों के प्राण जल से उत्पन्न हुए इन विविध अन्नों से ही सम्भव होते हैं। इन में से अमृत को देवों का, सुधा को नागों का, स्वधा को पितरों का और वीरुध को पशुओं का अन्न कहा गया है।

अन्नमेव मनुष्याणां प्राणानाहुर्मनीषिणः।
तच्च सर्वं नरव्याघ्र पानीयात् सम्प्रवर्त्तते।
तस्मात् पानीयदानाद् वै न वरं विद्यते क्वचित्॥

मनीषियों ने अन्न को ही मनुष्यों का प्राण कहा है। और नरव्याघ्र युधिष्ठिर! अन्न जल से उत्पन्न होता है। अतः जलदान से उच्च अन्य कोई दान नहीं होता।

तच्च दद्यान्नरो नित्यं यदीच्छेद् भूतिमात्मनः।
धन्यं यशस्यमायुष्यं जलदानमिहोच्यते।
शत्रूंश्चाप्यधि कौन्तेय सदा तिष्ठति तोयदः॥

जो मनुष्य इस लोक में एवं परलोक में श्रेय प्राप्ति की इच्छा रखते है, उन्हें नित्य जलदान में प्रवृत्त होना चाहिये। जलदान करने वाला इस लोक में धन, यश एवं दीर्घायु प्राप्त करता है। कौन्तेय युधिष्ठिर! जल का दाता अपने शत्रुओं से सदा गुरुतर बैठता है।

सर्वकाममवाप्नोति कीर्तिं चैव हि शाश्वतीम्।
प्रेत्य चानन्त्यमश्नाति पापेभ्यश्च प्रमुच्यते॥

जल का दाता इस लोक में अपनी सब कामनाओं की पूर्ति और शाश्वत कीर्ति को प्राप्त होता है, और अन्ततः सब पापों से मुक्त हो परलोक में अनन्त सुख का उपभोग करता है।

तोयदो मनुजव्याघ्र स्वर्गं गत्वा महाद्युते।
अक्षयान् समवाप्नोति लोकानित्यब्रवीन्मनुः॥

मनुजव्याघ्र एवं महाद्युति युधिष्ठिर! स्वयं मनु कह गये हैं कि जल का दाता स्वर्ग में पहुँचकर अक्षय लोकों को प्राप्त होता है।

पुरी
२८.३.९६

निश्चलानन्दः

Centre for Policy Studies *www.cpsindia.org*

श्रीमन्नारायणरामानुजयतिभ्यो नमः

॥ श्री श्री त्रिदण्डी श्रीमन्नारायण रामानुज जीयर् स्वामीजी ॥

सीतानगरम्

अभिनन्दनम्

श्रीमते नारायणाय नमः
अनेकानि मङ्गलाशासनानि

'अन्नं बहु कुर्वीत' शीर्षकयुक्त इस शुभाख्य एवं शोभनीय निबन्ध का अवलोकन किया।

श्री जितेन्द्र बजाज एवं श्री मण्डयम् दोड्डमने श्रीनिवास द्वारा 'अन्नं बहु कुर्वीत' के श्रुतिवाक्य का आश्रय लेकर इस श्रुतिवाक्य की व्याख्यास्वरूप विरचित इस ग्रन्थ का हमने सकुतूहल परिशीलन किया है। इस ग्रन्थ में अन्नदान एवं अन्नसम्पादन के विषय में अनेक ग्रन्थों से अनेक उपबृंहण वाक्य उद्धृत किये गये हैं। ग्रन्थ से इसके दोनो रचयिताओं की अपने विषय में परिश्रमसाध्य निपुणता और इस विषय के प्रति श्रद्धा एवं निष्ठावान् बुद्धि स्पष्ट भासित होती है।

श्रुति, स्मृति, पुराण एवं इतिहास ग्रन्थों में अन्नसम्बन्धी जो अनेक कथाएँ एवं सूक्तियाँ पायी जाती हैं, वे सब यहाँ एक ही स्थान पर क्रमबद्ध हो पाठक के दृष्टिपथ में आ प्रस्तुत होती हैं। अन्न निश्चय ही मानवमात्र के लिये अत्यन्त उपयोगी है। अतः समस्त मानव समाजों के लिये अन्न की महिमा का ज्ञान तो आवश्यक ही है। इसलिये प्राचीन वाङ्मय में निबद्ध अनेक वाक्यों, श्लोकों एवं कथाओं को संग्रहित कर रचा गया यह ग्रन्थ निश्चय ही चरमकोटि के अभिनन्दन के योग्य है।

हमारा विश्वास है कि आर्ष वाङ्मय में श्रद्धा रखने वालों में ही नहीं अपितु ऐसी श्रद्धा से वञ्चित जनों में भी यह ग्रन्थ अत्यन्त स्वागत पायेगा। इस ग्रन्थ में भारत के प्राचीन परमर्षियों के

Centre for Policy Studies www.cpsindia.org

अन्नसम्बन्धी सकल चिन्तन को निबद्ध कर दिया गया है। इस निबन्ध के माध्यम से प्राचीन ऋषियों की मेधा पुनः प्रकाशित हो रही है। पूर्वकाल में भारतीय केवल आध्यात्मिक भावनाओं के प्रचार में ही श्रमशील नहीं होते रहे, उन्होने प्रापञ्चिक भोगों के सम्यक् उत्पादन एवं इस जगत् के कार्यों की समुचित व्यवस्था के प्रति भी वैसे ही परिश्रमपूर्वक प्रयास किये।

आध्यात्मिक जीवन का सम्यक् अनुसरण करते हुए मनुष्य इस लोक एवं परलोक दोनों में निश्चय ही सुख एवं आनन्द को प्राप्त होता है, ऐसा हमारे पूर्वज मनीषियों का सुदृढ़ विश्वास रहा है। जब तक भारतवर्ष की सहज आस्तिक बुद्धि किसी प्रकार के आघात अथवा प्रतिबन्ध की शङ्का से मुक्त रही है, तब तक सभी भारतीय विषयभोगों का सम्यक् सम्पादन करते रहने के औचित्य को भी स्वीकार करते आये हैं। इस विषय में प्राचीन सूक्ति हैं – 'अनिषिद्धसुखत्यागी पशुरेव न संशयः', अनिषिद्ध सुखों का भी त्याग करने वाला तो पशु समान ही है, इसमें कोई संशय नहीं हो सकता। इस सूक्ति से इस विषय में भारत की सहज बुद्धि स्पष्ट प्रकाशित होती है।

जिन लोगों में समाज में समीचीन जीवन विधान स्थापित करने की कामना है, वे यदि वैदिक वाङ्मय में श्रद्धा न भी रखते हों तो भी उनके लिये अन्न के स्वरूप, स्वभाव, उपयोग एवं विनियोग का समुचित ज्ञान प्राप्त करना तो आवश्यक ही है। क्योंकि वे श्रद्धाविधुर लोग भी अन्न से ही प्राण पाते हैं। 'आहारशुद्धौ सत्त्वशुद्धिः', शुद्ध आहार से शुद्ध सत्त्व की स्थापना होती है, उपनिषद् का यह सन्देश किस सहृदय के अन्तःकरण को छू नहीं जाता? 'अन्नमयं हि सोम्य मनः', यह मन अन्नमय ही है, ऐसा उपदेश देने वाली शतशः सूक्तियों के समक्ष किस समालोचक का सिर झुक नहीं जाता?

यह निश्चय ही सत्य है कि शुद्ध मन में ही शुद्ध भावनाएँ प्रवाहित होती हैं, और जब ऐसी शुद्ध भावनाएँ प्रत्येक व्यक्ति में प्रकाशित होती हैं तो समस्त समाज सत्य के साक्षात्कार की ओर ले जाने वाले मार्ग पर चल निकलता है। अतः हम दृढ विश्वास के साथ कह सकते हैं कि मानवमात्र के जीवनसौष्ठव के मुख्य साधनभूत अन्न के सम्पूर्ण विज्ञान को प्रकाशित करने वाला यह निबन्ध सब के ही लिये उपकारक एवं उपादेय है।

धन, सुवर्ण, वाहन एवं अन्य कमनीय वस्तुओं की अपेक्षा अन्न ही मरणधर्मा मनुष्य को सम्पूर्ण तृप्ति का अनुभव करवाता है। जब प्रजा को पर्याप्त अन्न प्राप्त होता है तभी वह पारस्परिक हिंसा, दौर्जन्य, स्तेय आदि समाजविरुद्ध कर्मों से विमुख हो पाती है, और तभी विश्व में सुस्थिर शान्ति विराज पाती है। अतः अन्न के उत्पादन के लिये उपयुक्त क्षेत्रों को कहीं भी औद्योगिक अथवा आवासीय क्षेत्र के रूप में परिवर्तित नहीं करना चाहिये। आवास आदि के लिये तो

अन्नोत्पादक्त क्षेत्रों को छोड़कर अन्य ऊसर क्षेत्रों का ही उपयोग होना चाहिये। ऐसा करने से आज की अपेक्षा कहीं आधिक अन्न का उत्पादन हो पायेगा। अन्नबाहुल्य होने पर स्थान-स्थान पर अन्नकूट भी स्थापित हो पायेंगे। तब समस्त प्रजाओं को उदरपूर्ति के लिये पर्याप्त एवं प्रशस्त अन्न प्राप्त होगा। उससे निश्चय ही विश्व में शान्ति का साम्राज्य स्थापित हो पायेगा।

अन्नदान के व्रत का पालन करने वाले अनेक कृपालु महात्मा जनों ने बहुत सारी धर्मशालाओं का निर्माण करवाया है और उनके समुचित निर्वाह के लिये विपुल धन एवं भूमि का प्रावधान किया है। भारतदेश के समस्त ग्रामों एवं समस्त छोटे-बड़े नगरों में आज भी धर्मशालाएँ चल रही हैं। यह हम सब को ज्ञात ही है।

सहस्रों वर्ष तक घोर तप करने के उपरान्त दैववश प्राप्त किञ्चित् अन्न को क्षुधातुर अर्थी को अर्पित कर स्वयं कुछ खाये-पिये बिना ही पुनः तप में प्रवृत्त हो जाने वाले भारत के महान् ऋषियों के विषय में हम सुनते आये हैं। परिश्रम से अर्जित अन्न गृहद्वार पर आये अतिथि को समर्पित कर स्वयं उपोषित ही रहने वाली भारतीय गृहिणी का हम सादर स्मरण करते हैं। श्येन की क्षुधा शान्ति के लिये अपने शरीर का माँस देकर अपनी शरण में आये कपोत की रक्षा करने वाले चक्रवर्ती राजा शिबि की गाथा हमारी स्मृति से कभी हट नहीं पाती। कपोतपत्नी को पिञ्जरे में बाँधकर अपने गृह पर आने वाले व्याध को अपना शरीर ही अन्न के रूप में प्रस्तुत करने वाले महात्यागी कपोत का हम सम्मान करते आये हैं।

आह! काल का कैसा विपर्यय हुआ है! क्या कहा जाये? कहा तो जाता था कि 'द्वार-द्वार पर विचरता हुआ भिक्षु याचना नहीं करता अपितु हमें शिक्षा ही देता है। वह हमें सिखाता है कि दानशील होकर हम दान देने के अधिकारी बने रहें, दान से विरत हो हम उसकी भाँति दान देने की क्षमता से वञ्चित न हों।' प्राचीन भावना तो यही रही है कि अन्न अथवा अन्य किसी वस्तु को पाने के लिये हमारे द्वार पर जो भिक्षु आता है वह हमें हमारे हित का उपदेश करने के लिये ही आता है, हमसे कुछ माँगने के लिये नहीं।

महाभाग श्री जितेन्द्र बजाज एवं श्री श्रीनिवास द्वारा महान् शोधपूर्वक रचित यह ग्रन्थ बहुलता से अन्नोत्पादन करने एवं बहुलता से ही अन्नदान करने के व्रत में दीक्षित प्राचीन भारतीयों के औदार्य के प्रति बोध जागृत करे, आज के भारतीयों का मार्गदर्शन करे और देश-देशान्तर में भारतीयों की दानशौण्डता का प्रचार करे! यही हमारा अशीर्वाद है।

सीतानगरम्
१३.३.९६

अनेक मङ्गल आशिषों के साथ
जय श्रीमन्नरायण

Centre for Policy Studies *www.cpsindia.org*

॥ श्री विश्वेशतीर्थ स्वामीजी ॥

श्री पेजावर अधोक्षज मठ
जगद्गुरु मध्वाचार्य संस्थान
उडुपि

भगवान् ब्रह्मा ने 'द' शब्द का उद्घोष कर लोभ एवं दुराशा से आक्रान्त मानवकुल के प्रति दान का सन्देश दिया। त्यागमय जीवन जीते हुए दान करते चले जाओ, यही इस सन्देश का सार है। परन्तु हमें विषादपूर्वक यह निवेदन करना पड़ रहा है कि आजकल तो सामाजिक जीवन में सर्वत्र 'दानिता' के स्थान पर 'दीनता' का ही प्रसार हुआ दिखायी देता है।

दानकार्यों के सन्दर्भ में शास्त्रों में अन्नदान की विशेष प्रशंसा हुई है। 'अन्नस्य क्षुधितं पात्रम्', जो भी भूखा है वह अन्न पाने का पात्र है, इस आदेश के साथ शास्त्र जाति एवं वर्ग भेद की उपेक्षा कर समस्त क्षुधित जनों को सन्तुष्ट करने का विधान प्रतिपादित करते हैं।

भगवान् कृष्ण ने स्वयं घोषणा की है कि जो अन्यों के साथ बाँटे बिना, अन्यों के लिये समुचित अन्नवितरण का प्रबन्ध किये बिना, अकेले स्वयं अपने लिये अन्न का उपभोग करता है, वह वस्तुतः अन्न का नहीं मात्र पातकपिण्ड का ही उपभोग करता है।

अन्नदान की ऐसी उच्च महिमा का प्रस्तुत पुस्तक में विविध ग्रन्थों का परिशीलन कर विशद विवेचन किया गया है। हम अन्नदान की महिमा सम्बन्धी इस पुस्तक का सादर अभिनन्दन करते हैं। इस पुस्तक के माध्यम से समुचित सामाजिक जागृति का सम्पादन हो! यही हमारा आशीर्वाद है।

तिरुपति
२४.१२.९५

इति
सप्रेम नारायणस्मरणानि

Centre for Policy Studies *www.cpsindia.org*

।। विरक्त शिरोमणि श्री स्वामी वामदेवजी महाराज ।।

अखिल भारतीय सन्त समिति
आनन्द कुटीर
वृन्दावन

श्रीगणेशाय नमः

'अन्नं बहु कुर्वीत' शीर्षकयुक्त पुस्तक का अवलोकन हमने किया। यह पुस्तक जितेन्द्र बजाज एवं श्रीनिवास द्वारा महान् प्रयत्नपूर्वक रची गयी है।

'अन्नं बहु कुर्वीत', अन्नबाहुल्य करो!, यह तैत्तिरीयोपनिषद् का श्रुतिवाक्य है। इस श्रुति का क्या अभिप्राय है? अभिप्राय तो यही है कि जब अन्न की बहुलता होती है तभी अन्नदान भी बहुलता से हो पाता है। और, अन्नदान की बहुलता से क्या होता है? तब कोई क्षुधा से पीड़ित अथवा अशान्त नहीं रहता। और, जब कहीं कोई अशान्त नहीं रहता तो सब लोग सुखी होकर जीवन के अर्थ के प्रति जिज्ञासा अर्थात् तत्वजिज्ञासा को प्राप्त होते हैं। भोजन आदि की चिन्ता से रहित, शान्त एवं धर्माचरण में प्रवृत्त शुद्ध चित्त में ही तत्वजिज्ञासा उत्पन्न होती है। तत्वजिज्ञासा के उत्पन्न होने पर तत्वविचार में प्रवृत्ति होती है। और तत्वविचार से, जीवन के सत्य पर सम्यक् चिन्तन से, तत्वज्ञान का प्रादुर्भाव होता है। इस सम्बन्ध में श्रीमद्भागवत में कहा गया है – 'धर्मस्य ह्यापवर्ग्यस्य नाऽर्थोऽर्थायोपकल्पते।', धर्म जो निश्चय ही आपवर्ग्य है उसका अर्थ धन-सम्पत्ति की कल्पना करना नहीं है। आपवर्ग्य अपवर्ग अथवा मोक्ष के साधन को कहा जाता है, और यह साधन तत्वज्ञान ही है। अतः तत्वज्ञान के साधनरूप धर्म का प्रयोजन धन-सम्पदा नहीं तत्वज्ञान ही हो सकता है।

जो दान देते हैं उनमें भी विविदिषा का आविर्भाव होता है और विविदिषा तत्वजिज्ञासा का ही पर्याय है। इस प्रकार दान के कर्म से दान देने वाला और लेने वाला दोनों ही कल्याण के पात्र बनते हैं। दान पाने वाले को तृप्ति की और देने वाले को विविदिषा की प्राप्ति होती है। इस सन्दर्भ में बृहदारण्यक का श्रुतिवाक्य है – 'तमेतं वेदानुवचनेन ब्राह्मणा विविदिषन्ति यज्ञेन दानेन

Centre for Policy Studies www.cpsindia.org

तपसाऽनाशकेन', ब्राह्मण वेदानुवचन से, यज्ञ से, दान से और अनुशासित तप से विविदिषा प्राप्त करते हैं।

प्रस्तुत पुस्तक पर विचार करने से दान के फल सम्बन्धी जो बोध होता है वह भी लिख दिया जाये। अन्नदान साक्षात् प्राणदान अर्थात् जीवनदान ही है। जीवन के सुरक्षित रहने से ही धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्षरूपी चतुर्विध पुरुषार्थों की साधना एवं प्राप्ति सम्भव होती है। अतः अन्नदान को चतुर्विध पुरुषार्थ के दान का ही पर्याय कहा जा सकता है। इसीलिये क्षुधित भिक्षुक एवं अतिथि अथवा भिक्षा पाने के सहज अधिकारी संन्यासी, ब्रह्मचारी एवं ब्राह्मण की क्षुधानिवृत्ति के लिये भी अन्न न देने वाले की धर्मशास्त्रों में बहुधा निन्दा सुनी जाती है। इस सन्दर्भ में शास्त्रों के वचनों को प्रस्तुत पुस्तक के प्रथम भाग में सम्यक् उद्धृत किया गया है। इन वाक्यों के माध्यम से बताया गया है कि कैसे यज्ञ से देव प्रसन्न होते हैं, देवों के प्रसाद से वृष्टि होती है और सम्यक् वृष्टि से बहुमात्रा में अन्न की उत्पत्ति होती है। इस प्रकार देवों के प्रसाद से उत्पन्न हुए अन्न से देवों का भाग निकाले बिना अकेले स्वयं भोजन करने वाला भोक्ता मात्र अपने ही शरीर को पुष्ट करता है। ऐसा भोक्ता तप आदि साधनों के बल से स्वर्ग को प्राप्त होने पर भी क्षुधा से पीड़ित ही रहता है।

आज के तथाकथित समाजवाद की अपेक्षा भारतवर्ष के किसी एकछत्र शासक के शासन में भी किस प्रकार का सुरम्य समाजवाद हुआ करता था, यह भी पुस्तक में दर्शाया गया है। भारत का वह सामाजिक बोध भी अन्नदान पर ही टिका था। इस विशिष्ट भारतीय सामाजिक बोध का वर्णन पुस्तक के अन्तिम भाग में तञ्जावूर राज्य से सम्बन्धित प्रकरण में हुआ है। इस वर्णन को पढ़कर हृदय द्रवीभूत हो उठता है। तब जब यातायात के साधन आज जैसे समृद्ध नहीं हुआ करते थे, उन दिनों भी हिमालय से लेकर दक्षिण समुद्र तक यात्रियों का प्रवाह बना रहता था। वह अन्नदान की ही महिमा थी।

प्रस्तुत पुस्तक के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि जिनकी अन्नदान में निष्ठा होती है उनमें आत्मबल का भी संवर्धन होता है, और ऐसे आत्मबल के बिना तो परमात्मा की प्राप्ति सम्भव नहीं होती। जैसे कि श्रुति का आदेश है – 'नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः', इस आत्मा तक बलहीन की पहुँच नहीं हो सकती।

अधिक क्या कहा जाये? जिन्हें अधिक की जिज्ञासा हो उन्हें पुस्तक का ही अवलोकन करना चाहिये॥ इति शुभम्॥

वृन्दावन
१०.५.९६

विद्वदनुचर
परमहंस स्वामी वामदेव

Centre for Policy Studies *www.cpsindia.org*

श्रीः

श्री चन्द्रमौलीश्वराय नमः

श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यवर्य

श्रीशङ्करभगवत्पादाचार्यपरम्परागत

॥ जगद्गुरु श्रीशङ्कराचार्य श्री जयेन्द्र सरस्वती स्वामिगल् ॥

श्रीकामकोटिपीठमहासंस्थानम्

काञ्चीपुरम्

प्राचीन श्रुति है कि अन्नदान एवं जलदान से उच्च कोई अन्य दान नहीं होता। परन्तु, अन्न किसे दिया जाना चाहिये? इस प्रश्न का उत्तर यही है कि जो भी भूखा है वह अन्न पाने का पात्र है, 'अन्नस्य क्षुधितं पात्रम्' इति।

अन्य दानों की अपेक्षा अन्नदान में एक औन्नत्य स्पष्ट दिखायी देता है। अन्य दानों के सन्दर्भ में दान पाने वाला कभी भी सम्पूर्ण सन्तुष्टि को प्राप्त नहीं होता, उसे कभी ऐसा आभास नहीं होता कि, 'पर्याप्त हुआ, अब और नहीं चाहिये!' परन्तु जो अन्नदान पाता है वह उदरपूर्ति तक भोजन करने के उपरान्त पूर्णतः सन्तुष्ट हो जाता है। 'मैं सन्तुष्ट हुआ, यह पर्याप्त हुआ, पर्याप्त हुआ', वह इस प्रकार सोचने एवं कहने लगता है।

अन्न शब्द से आहार का अर्थ लिया जा सकता है। मनुष्य से लेकर कृमि-कीट पर्यन्त सब प्राणी अन्न अथवा आहार के आधार पर ही जीवित रहते हैं। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को 'अन्नाद्भवन्ति भूतानि' का उपदेश देकर स्पष्टतया अन्न को ही प्राणियों की उत्पत्ति का कारण बताया है।

अब, 'अन्नं बहु कुर्वीत' शीर्षक पुस्तक का अवलोकन कर हम अत्यन्त प्रसन्न हैं। चेन्नपुरी के श्री जितेन्द्र बजाज एवं मण्डयम् दोड्डमने श्रीनिवास ने अन्नदान के महत्त्व का विस्तार से विवेचन करते हुए यह पुस्तक लिखी है। इस पुस्तक को हिन्दी, द्रविड़ एवं आङ्ग्ल भाषओं में

Centre for Policy Studies www.cpsindia.org

प्रकाशित किया जा रहा है। उपनिषद्, मनुधर्मशास्त्र एवं इतिहास-पुराण में पाये जाने वाले अन्नदान सम्बन्धी अनेक वाक्यों और कतिपय आख्यायिकाओं का आधार लेकर इस पुस्तक में अन्नदान की श्रेष्ठता एवं विशिष्ट फल आदि का सम्यक् वर्णन किया गया है।

आजकल खाद्य एवं धान की खेती, धान्य के संरक्षण एवं कृषि से उत्पन्न अनाज के परिष्कार के लिये अनेक नये ढङ्ग अपनाये जा रहे हैं। परन्तु इन नूतन क्रियाओं में धान्य की हितमेध्यता के रक्षण पर, धान्य को मानव के लिये हितकारी एवं पौष्टिक बनाये रखने पर, ध्यान नहीं दिया जाता। किसी प्रकार अधिक मात्रा में अन्न का उत्पादन कर लेना ही इन नूतन क्रियाओं का एकमेव लक्ष्य है। पूर्वकाल में हम धान्य की खेती, संरक्षण, समुचित वितरण एवं अन्नदान के विषय में धर्मसम्मत, आरोग्यकारक एवं हितकारी मार्ग का अनुसरण करते हुए भी अन्न के प्रचुर उत्पादन के प्रति जागरूक रहा करते थे। वही लोगों के दीर्घकालिक हित एवं श्रेयस् का मार्ग है।

प्रस्तुत पुस्तक को पढ़कर अन्नदान के विषय में पूर्ण ज्ञान प्राप्त होता है। सभी भारतीय इस पुस्तक को अवश्य पढ़ें और यथाशक्ति अन्नदान भी करें! यही हमारा आशीर्वाद है।

काञ्चीपुरम्
३१-७-१९९५

नारायणस्मृतिः

Centre for Policy Studies *www.cpsindia.org*